रूपम झा

रूपम झा

जन्म: शासन, समस्तीपुर, बिहार।

शिक्षा: एम. ए. (मैथिली एवं हिन्दी)

नेट उत्तीर्ण: मैथिली भाषा

प्रकाशित कृति: मैथिली दोहा-संग्रह - 'चान ओलती ठाढ़ अछि'।

हिन्दी नवगीत-संग्रह-'चल सुबह की बात कर'

साहित्य अकादमी द्वारा अनुवाद

1.मलियालम से मैथिली

उपन्यास "सूफी परंज कथा",

लेखक के.पी.रामनुण्णि

अनुवाद

1. बाल कथा-संग्रह 'अंतरिक्षमे गुनगुन' लेखक मनोज कुमार झा

2.उपन्यास-'चान गवाह' लेखक उर्मिला शिरीष

सम्मान - प्रभात खबर दैनिक अखबार द्वारा-- अपराजिता सम्मान 2019

पं रामानुज त्रिपाठी सृजन संस्थान (उत्तर प्रदेश) द्वारा -- रामानुज त्रिपाठी स्मृति गीत

साहित्य सम्मान 2022

विश्वंभर फॉउण्डेशन (झारखंड) द्वारा -- विजयलक्ष्मी युवा सम्मान 2023

विधा: कथा, लघुकथा, गीत, ग़ज़ल, दोहा।

विशेष : हिन्दी और मैथिली भाषा में निरंतर लेखन

१

हैं सहज स्वीकार हम

धूप सिर पर झेलते हैं,
छटपटाते हैं
एक दिन जीवन से बस हर
दिन घटाते हैं
जो समर्थक बन गये
चुपचाप रहकर के
हैं सहज स्वीकार हम

"हम सलाखों में जिये, कब
पंख फैलाए
स्वप्न भी बस बंद कमरों के
हमें आये
एक डर को जी रहे जो एक
अरसे से
सिर्फ वह आकार हम

"लांघ पाये हम नहीं अपनी
उदासी
को
प्यास पूरी ज़िन्दगी का, हम
रहे हैं ढो
जो हमेशा ही रहे कर्तव्य
बनकर ही
हैं वही अधिकार हम

२

घूम रही है दहशत ओढ़े

घूम रही है
दहशत ओढ़े क्यों बस्ती में
लाश
चलो आदमी की करते हैं
फिर से आज तलाश।

कहीं हरापन नहीं
पेड़ हैं सूखे पड़े हुए
उतरे चेहरे दुख से जैसे
रूठे खड़े हुए
कौन खिलाएगा पतझर में
फिर से सुर्ख पलाश।

क्यों सपनों को नहीं
देखते, क्यों यह रंग उड़ा
क्यों उम्मीदों से जीवन का
रिश्ता नहीं जुड़ा
क्या उदास चेहरों का दोषी
है केवल आकाश।

अख़बारों में
इनकी बातें होती कहीं
नहीं
महलों की रंगत में बस्ती
दिखती कहीं-कहीं
हाथ धरे क्या मैं भी बोलूँ
हो जाता कुछ काश !

३

धूल ओढ़कर सड़क किनारे

धूल ओढ़कर सड़क किनारे
बालू चाल रहा है बच्चा

उसके इन कोमल बाँहों में
लोहे-सी ताक़त दिखती है
आँखों से जीवन दिखता है
कपड़े से हालत दिखती है

अपनी मेहनत-मज़दूरी से
ख़ुद को पाल रहा है बच्चा

बूढ़े लोगों से तनकर वह
बूढ़ों जैसा बतियाता है
थक जाने पर बूढ़ों के सँग
खैनी-वैनी भी खाता है

ऐसा लगता है बूढ़ों-सा
ख़ुद को ढाल रहा है बच्चा

सपनों की दुनिया से बेहद
कटा हुआ है, दूर खड़ा है
जाने कितने टुकड़ों में वह
बँटा हुआ, मजबूर खड़ा है

तपते मन पर श्रम से अपने
पानी डाल रहा है बच्चा

४

मैंने सपने में देखा है

छोटे मन में छोटे-छोटे
सपने लिये बढ़ी

मेरे सपनों में नदिया थी
जंगल, मेघ, पहाड़
मैंने कभी नहीं चाहा है
निर्जन और उजाड़
मैंने अंधे युग की पुस्तक
अब तक नहीं पढ़ी

मैंने सपने में देखा है
बस आपस का प्यार
मैंने नहीं छीनना चाहा
औरों का अधिकार
किसी लता सी मैं पेड़ों पर
बिल्कुल नहीं चढ़ी

मेरे बादल मुझमें आकर
करते सुख से वास
हरे-भरे मेरे जीवन में
सुख का है अहसास
मैं अपने अंदर में खुद से
हर दिन रही बड़ी

५

फगुनाहट दस्तक देती थी

दिन वसंत के कहां खो गये
रंग चढ़ गया शहरी

फगुनाहट दस्तक देती थी
बौराते थे आम
देहरी आनंदित होती थी
गाती थी हर शाम

महकी-महकी पुरवा के संग
खोई मदिर दुपहरी

लाल लाल दहके पलास का
जीवन का उल्लास
किस्से में ही कहीं खो गया
महुआ चढ़ा सुवास

कहीं दिखाई नहीं दे रहे
कोयल और गिलहरी

आज पहाड़ी मदिर हवा भी
हैं विष डूबे तीर
सांस-सांस की गंध खो गई
टीस हुई प्राचीर

किस-किस को हम कथा
सुनायें
हवा नीर सब जहरी

६

भाषण में कोरी बातों का

राज मार्ग से जाकर कह दो
यह गणतंत्र अधूरा है

है किसान धरने पर बैठा
मजदूरों की बात नहीं
कैसा यह जनतंत्र कि जिसमें
जन की कोई बात नहीं

जो आधार विहीन दिख रहा
सारा तंत्र अधूरा है

भाषण में कोरी बातों का
हम करते सम्मान नहीं
काँप रही हैं भारत माता
पर कोई संज्ञान नहीं

ऐसे षड्यंत्रों में, उत्सव का
हर मंत्र अधूरा है

शोषण, दमन और उत्पीड़न
जन-जन का आधार नहीं
और करेगा नव भारत अब
इन सबको स्वीकार नहीं

जन का अगर जागरण ना हो
तो यह तंत्र अधूरा है

फगुनाहट दस्तक देती थी

सबके पास सवाल बहुत है
लेकिन कहीं जवाब नहीं है

किससे पूछें
क्यों ऑखों में
तैर रही है बस लाचारी
काट रही है धीरे-धीरे
हमको महँगाई की आरी

फिर भी खड़े लुटेरों के संग
इन ऑखों में आब नहीं है

धीरे-धीरे मर जाएँगी
अधिकारों की सारी बातें
दिन के हिस्से में
श्रम होगा
फिर भी होंगी भूखी रातें

आखिर कल पाएँगे क्या हम
जब ऑखों में ख्वाब नहीं है

हर दिन कितना
खोया हमने
और अभी हर दिन खोना है
अगर न समझे
चक्रव्यूह तो
फँसना है,केवल रोना है

मोबाइल पैठा है मन में
सच की कहीं किताब नहीं है

केवल बातें ही होती है

केवल बातें ही होती है
हम सब तो बातों में खुश हैं

अगड़े-पिछड़े की दुकान वे
खूब चलाते हैं
चीन पाक की बातों को भी
खूब भुनाते हैं

दिन भर वहाँ कबाब बँट रहा
हम भूखी रातों में खुश हैं

कुछ लोगों के घर दीवाली
बाकी दीवाला है
हर विमर्श बेकार खड़ा है
पाँवों में छाला है

सपने सब बेहाल पड़े हैं
हम इन हालातों में खुश हैं

पुछेंगे कब उनसे जो आराम
बेचते हैं
मन की श्रद्धा बेच रहे जो
राम बेचते हैं

खुद से कब पूछेंगे यह हम
क्यों हम आघातों में खुश हैं

हम सच्चाई जान रहे हैं

झूठे किस्से नहीं सुनाओ
हम सच्चाई जान रहे हैं

किसने जीवन में
फैलाये हैं अँधियारे
कैसे डूबी है
जनता की नाव किनारे

लूट रहा है कौन हमारा
पाई-पाई जान रहे हैं

जान रहें हैं किसने
घर-घर आग लगाई
किसने बच्चों के
हाथों दी दियासलाई

इतने भी हम मूर्ख नहीं हैं
हर चतुराई जान रहे हैं

लोकतंत्र को
भीड़तंत्र में बदला किसने
श्रापों को है
आज मंत्र में बदला किसने

कौन यहाँ है बस बातों का
हातिमताई जान रहे हैं

घात लगाए बैठे हैं सब

कैसे बया गीत गायेगी
चारों ओर शिकारी है

धीरे-धीरे उसने कर दी
अपनी बंद उड़ान
घात लगाए बैठे हैं सब
मुश्किल में है जान

मन से टूटे हुए ख्वाब की
जंग अभी तक जारी है

ख़ुद अपने ही चोचों से वह
तोड़ रही है पंख
घर से बाहर देख रही है
बढ़ा हुआ आतंक

माँस नोचने के मंसूबे
मानवता पर भारी है

घात लगाए आसमान में
घूम रहा है बाज
और दूर से देख रहा है
उसको तिरंदाज

सोच-सोचकर मन ही मन वह
हार गयी बेचारी है

११

अपनी बाँहों की ताकत पर

पतझर की आँखों में
मुझको फूल खिलाना है
मरुस्थल जैसे जीवन को
झील बनाना है

काँटों से डरकर मैं पथ को
छोड़ नहीं सकती
सपनों भरी नींद को अब मैं
तोड़ नहीं सकती

अपना दर्द मिटाने खुद
मरहम बन जाना है

बंजर होते भावों में
उद्यान भरूँगी मैं
मुस्कानों की खेती से
खलिहान भरूँगी मैं

चट्टानों पर पीपल का
एक पेड़ लगाना है

अपनी बाँहों की ताकत पर
है विश्वास मुझे
क्या कुछ खोया है इसका भी
है आभास मुझे

मुझको अँधियारे के आगे
दीप जलाना है

१२

मुझको नहीं बदलना आया

साँचे में कब ढलना आया
मुझको नहीं बदलना आया

वक्त पाँव को काट रहा है
काँटे केवल बाँट रहा है

लेकिन आँच
भले हो कितनी
मुझको नहीं पिघलना आया

कुछ वादों से, कुछ नारों से
उत्कोचों से, हथियारों से
मैंने नहीं
संधियाँ की हैं
मुझको नहीं बहलना आया

मैंने सच का साथ दिया है
गिरे हुए को हाथ दिया है
मैं फीनिक्स पक्षी हूँ
जिसको
आया तो बस जलना आया

१३

लोग डर रहे

कैसे सब कुछ
ठीक-ठाक है

हर दिन ही घुसपैठ
बढ़ रही
सत्ता के मुँह
जमी है दही

बातों में बस
चीन-पाक है

हैं किसान-मजदूर
मर रहे
घर के अंदर
लोग डर रहे

क्या होगा कल
मन आवाक है

वे दलदल में
आज गड़े हैं
अंधियारे के
साथ खड़े हैं

हाथों में
जिनके पिनाक है

१४

इक मशाल हूँ मैं

तुम जिसका उत्तर ना दोगे
वह सवाल हूँ मैं
कभी-कभी जो दिखती रूपये
की उछाल हूँ मैं

मैं मुफलिस हूँ,मैं गरीब हूँ,
लोकतंत्र का स्वर हूँ
जिसको तुम पढ़ना ना चाहो,
वैसा ही आखर हूँ
जिसके जूते पहन रहे हो
खिंची खाल हूँ मैं

मैं सदियों से ऐसे ही तो
ठगी गई हूँ
ना तुम बदले और नहीं मैं
यहाँ नई हूँ
अपने अन्दर खौल रही हूँ इक
उबाल हूँ मैं

अब चुप रहकर नहीं सहूँगी,
बोलूँगी मैं
अंधियारे को अब ताकत से
तोलूँगी मैं
सबको राह दिखाऊँगी जी
इक मशाल हूँ मैं

प्लांट में बनवा रहे दिन

पेड़-पौधों का धरा से,
काट कर जीवन।
प्लांट में बनवा रहे दिन
-
रात ऑक्सीजन।

हम तभी होंगे कि जब
जंगल रहेगा।
चेतना होगी,नयन में
जल रहेगा।
गर न होंगे पेड़,
होगा यह जगत
निर्जन।

बादलों को पेड़ ही
अपना बनाएँगे।
वे धरा को गर्म होने से
बचाएँगे।
पेड़ गर काटा तो,
झुलसेगा हमारा तन।

पेड़ होंगे तो हरी धरती
रहेगी यह।
पेड़ बिन बस दर्द को
सहती रहेगी यह।
पेड़ ही है ऑक्सीजन,
का सरल साधन।

खुद अपने ही जाल में

कबसे कमरा उलझा रहा
सवाल में
खुद अपने ही जाल में

मन का कुछ कह पाये
इसकी आदत नहीं लगी
हर दिन उम्मीदें
अपनों से जाती रही ठगीं

मिले भेड़िये
हर बकरी की खाल में

बढ़ा अगर है मन में तो
अवसाद
बढ़ा हर दिन
जीवन भर गहरा सन्नाटा रहा
भोकता पिन

फँसी रहीं इच्छाएँ
सिर्फ बवाल में

कमरे की खिड़की ने, नजरों
को
जीवन बाँटा
कदम-कदम अवसगुनों ने
रस्ता है काटा

हिम्मत काटी जग ने
ढाई चाल में

कुछ बदला क्या

कुछ बदला क्या
तुम कहते हो नया
साल है

तैर रही है आँखों में
मजदूरों के बेकारी
वही मुफलिसी, वही
जिन्दगी, मदद नहीं
सरकारी
अब भी भूखी आंतों में
जिंदा सवाल है

मँहगाई की डायन अब
भी नाच रही है
रामधुनी वैसे ही सत्ता
बाँच रही है
संसद के बाहर
अब भी फैला बबाल है

अब भी सपने के रस्ते
में काँटें है
जीवन में गहराए बस
सन्नाटे हैं
अब भी देह गरीबों का
बस एक खाल है

देता शह औ मात

बैनर पर बाजारी सपने
घर में सूखी आँत

बेच रहा है वक़्त काल बन
अब रोटी की गंध
राख न हो जाये यह जीवन
चारो ओर प्रबंध
चाह रहे हैं बोया जाए
फिर खेतो में दाँत

नई किरण लेकर आएगी
झुग्गी में सरकार
बोल रही जन-जन के हिस्से
अब होगा रोजगार
लेकिन केवल बातों से ही
हुई भूख कब शांत

पाँच बरस में 'क्योटो' अपना
भूल गया है ख्वाब
जिसके हिस्से जल होना था
मिला उन्हें तेजाब
लेकिन 'शाह' अभी भी खेले
देता शह औ मात

१९

सुबह नहीं है

हम सोये हैं
सिर्फ सुबह के इंतज़ार में

हर दिन सूरज का उग
आना सुबह नहीं है
दिनचर्या में ही लग जाना
सुबह नहीं है
ऐसी सुबह
खड़ी है हर दिन ही कतार
में

सुबह वही है, जिसके
अपने सपने होंगे
खुली आँख वाले होंगे, जो
अपने होंगे
वहाँ नहीं होगा
रोना, मन की पुकार में

हमको मिलकर सुबह
गगन पर लिखना होगा
भाग्य कहेंगे कबतक हम
जीवन का भोगा
हमें टांकना
होगा, सूरज को लिलार में

२०

हरदिन बदल रहा है

मेरे अंदर का निर्बल मन
हरदिन बदल रहा है

कब तक सहती जाती केवल
उम्मीदों को खोती
कब तक सूने कमरे में मैं
पड़ी अकेले रोती
धीरे धीरे मेरा यह मन
खुद ही संभल रहा है

मेरे सपनों की बगिया को
होगा मुझे सजाना
खुद से लड़ना होगा मुझको
मैंने अब यह जाना
शांत नीर था जो इस मन में
वह अब उबल रहा है

मैं चिड़िया मेरे पंखों में
है आकाश समाया
पिंजरे की दौलत को मैंने
हर दिन है ठुकराया
मेरा सूरज आँधियारे से
बाहर निकल रहा है

नारी त्याग अश्रु आँखों से

नारी त्याग अश्रु आँखों से
रख आँखों में नूतन सपना

सदियों से पीड़ा की मारी
बनी रही अब तक बेचारी
तुझपर तेरा जीवन भारी
आज बदल दो तुम पथ अपना

दुनिया कितनी नयी हो गई
सुर्ख और सुरमई हो गई
उठो बढ़ो गाओ मुस्काओ
छोड़ो दुख का मंतर जपना

लड़ना होगा, लड़कर हक लो
पूरा-पूरा अंतिम तक लो
बनो प्रेरणा जग की खातिर
छोड़ो रोना और कलपना

फूल तुम्हीं हो तुम हो माला
मत डालो होठों पर ताला
नियम बदल दो जंगल वाला
सीखो तुम लोहे-सा तपना